आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 6/अंक 2/जून 2026

Received: 23/05/2026; Accepted: 02/6/2026; Published: 28/06/2026

पंकज मित्र की कहानियों में व्यक्त आदिवासी संवेदना का यथार्थ

श्वेता कुमारी

शोधार्थी, हिन्दी विभाग

राँची विश्वविद्यालय ,राँची।

ई मेल - kumarishweta654654@gmail.com

मो -6200622712

श्वेता कुमारी, पंकज मित्र की कहानियों में व्यक्त आदिवासी संवेदना का यथार्थ, आखर हिंदी पत्रिका, **खंड 6/अंक 2/जून 2026**,(212 -220)

This work is licensed under CC BY-NC 4.0

https://doi.org/10.5281/zenodo.21441749

शोध सारांश

21वीं सदी जिसे वैज्ञानिक युग के नाम से भी जाना जाता है। साहित्य के क्षेत्र में, यह विभिन्न विमर्शों का युग रहा है। दलित एवं स्त्री विमर्शों की तरह आदिवासी विमर्श भी इसी युग की देन है। विश्व समुदाय या भारतीय समाज में आदिवासी एक ऐसी जनजातीय समूह है, जिसने इस पूरे वैज्ञानिक युग या भूमंडलीकरण के विकास प्रक्रिया से दूर आज भी अपनी पुरानी संस्कृति, रीति - रिवाज एवं रहन-सहन की जिंदगी में सिमटा हुआ है। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि विकास प्रक्रिया से दूर रहने के कारण शेष समाज से अलग होते गए और एक ऐसा समय आया जब उनकी अस्मिता ही खतरे में पड़ गई। अपनी अस्मिता को बचाने के लिए आज भी आदिवासी समुदाय संघर्षरत हैं। इनके विकास और अस्मिता के बचाव के लिए एवं मुख्य धारा में शामिल करने के लिए सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार की योजनाओं का निर्माण किया गया है। इन्हीं योजनाओं के जरिए सरकार इनकी जमीन हड़प रही है। रामशरण जोशी इस संदर्भ में बताते हैं कि- "भारत सरकार द्वारा लागू 'आदिवासी उपयोजना' उनके विकास के लिए सरकार की एक ऐसी दूरगामी

व्यापक रणनीति है, जिसके तहत आदिवासी तथा अन्य पिछड़े एवं सुदूर भीतरी अंचलों में प्रशासन- तंत्र का जाल फैलाया गया है। वनों को चीरकर सड़कें निकली गयी है। बाँधों का निर्माण हुआ है। औद्योगिकीकरण ने भीतरी क्षेत्रों में गहरी घुसपैठ की है।"[1]

कूटशब्द : आदिवासी, भूमि अधिग्रहण,आदिवासी संवेदना।

प्रस्तावना

सत्ता चाहे किसी की हो विकास के नाम पर सबसे ज्यादा शोषण का शिकार आदिवासी समुदाय ही हुआ है। आज जब हम आदिवासी संवेदना के यथार्थ की बात करते हैं, तो इसका संबंध सिर्फ जनजातीय समुदाय से संबंध रखने वाला मानव भर से नहीं है बल्कि उनसे संबंधित समस्त प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण से भी है। क्योंकि आदिवासी समाज धरती को अपनी माँ समान मानती है ,जितना जरूरत है केवल उतना ही उपयोग करते हैं । लेकिन सत्ता और राजनीति की लोलुपता एवं बड़े-बड़े कंपनियों के घुसपैठ ने आदिवासियों को विस्थापित होने के लिए मजबूर कर दिया है । हैरानी की बात तो यह है की जनजातियों के निवास स्थल प्राकृतिक खजाने के बीच ही होता है। कोयला, अभ्रक ,बॉक्साइड आदि खनिज संपदा आदिवासियों की जमीन पर मौजूद है। आदिवासी बहुल प्रदेशों में भारत के बिहार, छत्तीसगढ़, झारखंड के कई भागों में यह खनिज संपदायें मौजूद है। बावजूद यह समुदाय हासिए पर खड़ा है और आर्थिक रूप से कमजोर भी हो गया है जिस कारण इन्हें सताया जाता है, विरोध करने पर पुलिस प्रशासन पकड़ कर जेल में डाल देती है और नक्सली करार एन्काउन्टर कर देती है। इन्हीं के भय से आदिवासी समाज शहरों में निवास करना छोड़ जंगलों में रहना ज्यादा पसंद करते हैं। विस्थापित जीवन व्यतीत करने के कारण इन्हें रोजगार की भी कमी होती है और आर्थिक तंगी का भी सामना करना पड़ता है। सरकार आदिवासियों के कल्याण के लिए विभिन्न तरह की योजनाओं का निर्माण करता है लेकिन ये योजनाएं अब केवल नाममात्र के रह गए हैं । नौकरी के नाम पर आदिवासी स्त्रियों को जिस्मफरोशी के धंधे में धकेल दिया जाता है । इन्हीं संवेदनाओं को केंद्र में रखकर हिंदी कथा साहित्य में कई रचनाएं रची गई। कहानी सृजन परंपरा में 90 दशक की कथाकारों में पंकज मित्र एक ऐसे कथाकार के रूप में प्रसिद्ध है जिन्होंने मानवीय मूल्य के ह्रास और बाजार मूल्य के स्थापित होने के काले सच को कलमबद करने का प्रयास किया है । इस दौर में कई कथाकार हुए जिन्होंने आदिवासी समाज की समस्या एवं संवेदना को केंद्र में रखकर साहित्य रचा। उनमें भालचंद्र जोशी, संजीव, शिवमूर्ति आदि कई कहानीकार हैं जिन्होंने आदिवासी जनजीवन की खूब पड़ताल की है । कहानीकार पंकज मित्र की कहानी 'सेंदरा', 'चमनी गंझू की मुस्की', 'द इवेंट मैनेजर' आदि है जिनमें आदिवासी संवेदना का यथार्थ चित्रण मिलता है।

'सेंदरा' जिसका अर्थ है –'शिकार' या 'आखेट' लेखक ने शीर्षक से ही कहानी का परिचय दे दिया है ।इस कहानी में पंकज मित्र 'मुण्डा' और 'बिरहोर' जनजातियों के शोषण, विस्थापन एवं विनाश की कथा का वर्णन करते हैं। आदिवासी, सरकारी प्रशासन और राष्ट्रीय कंपनियों का आखेट बन जाते हैं । इस कहानी में आदिवासियों का मजबूरन विस्थापित होने की समस्या का चित्रण किया गया है। 'विस्थापन और मुकाबला

एक ही सिक्के के दो पहलू हैं या यूं कहें कि एक की बात करते हुए दूसरे की चर्चा अनिवार्यतः अनावश्यक हो जाती है। विकास के नाम पर सरकार द्वारा आदिवासियों की जमीन का खरीदा जाना और खरीद बिक्री कर इस पूरी प्रक्रिया के दौरान मुआवजे और पुनर्वास की सरकारी योजनाओं को लेकर लोगों के बीच पनपते असंतोष आदि को जिस प्राथमिकता के साथ यह कहानी अभिव्यक्त करती है वह आदिवासी जनजीवन पर इधर लिखी गई कहानियों में इसे महत्वपूर्ण बनता है।"[2] पंकज मित्र ने इस कहानी में पुलिस प्रशासन द्वारा आदिवासियों के साथ अत्याचार एवं खुद का उल्लू सीधा करने के लिए आदिवासियों को माओवादी घोषित कर देने की जो पीड़ा आदिवासियों में दिखाई देती है उसका वर्णन किया गया है। आदिवासी, जो जंगलों में रहते हैं, बिना किसी को नुकसान पहुंचाए एनकाउंटर के दौरान भोले- भाले आदिवासियों को पड़कर मीडिया के समक्ष , चेहरे पर नकाब लगाकर पेश करते हैं सोमरा मुंडा के नाम पर और प्रेस के सामने अपनी तस्दीक भी पेश करते हैं -"पुलिस की एक बड़ी सफलता और फोटो भी छपी थी पुलिस कप्तान की। सुरक्षा कारणों से सोमरा की फोटो लेने की इजाजत नहीं दी गई । वैसे सोमरा मुंडा की कोई फोटो पुलिस के पास थी भी नहीं।"[3] 'बार-बार सोमरा मुंडा नहीं है कहने पर पुलिस ने पशुओं की तरह समारा को धो डाला। वास्तविकता तो यह है कि विकास के नाम पर जबरन माओवादी घोषित कर उनकी जमीनें हथियाना का जाल बुना जाता है और यह देखा गया है कि जनजातीयां जहां निवास करती है, जिन जंगलों और पहाड़ियों में वास करती है, उसके नीचे कोयला और लोहे का भंडार भरा रहता है। जिस पर सरकार एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपनी गिद्ध की नजर गड़ाए बैठे हैं । जंगल की रखवाले प्रकृति से उतना ही लेते हैं जितना इन्हें जरूरत है। 'सेंदरा' कहानी में इस बात का संकेत मिलता है कि मशीनी युग का उनके इलाके में जब तक प्रवेश नहीं हुआ था वे खुश थे लेकिन उसके आने के बाद उनका अपना गांव ही उजड़ गया। "एतवा तो भात के लायक चावल और थोड़ा सुरगुजा उगा कर ही खुश था लेकिन केले की खाँवी की तरह/ आम के गुच्छे की तरह /अड़कट्ठे से बाँहवाले/ पत्थर- सी छाती वाले मशीनों और आदमियों का झुंड इलाके पर कब्जा करने लगे। उसके गांव को मरांगबुरु की तरफ ढेल- ठालकर थोड़ा ऊपर चढ़ाने लगे टुंगरी (टीले) पर।"[4] भू-माफियाओं ने आदिवासियों के जमीनों पर कारखाने का निर्माण करने के लिए निरक्षर आदिवासियों को अंगूठे का निशान लगवाकर और कुछ नोटों का लालच देकर उन पर कब्जा कर लेते हैं। 'सोना' और 'रूपा' जो सोमरा मुंडा की बेटियां थी, उन्होंने जमकर विरोध भी किया लेकिन यह कब्जियत नहीं रुकी। विस्थापन होने की समस्या आदिवासियों की रही है लेकिन वे विस्थापित होने से नहीं डरते हैं। चिंता तो सिर्फ प्रकृति के ह्रास का है। धरती पर बचे हुए जल, जंगल और जमीन के लूटने का है । कहानी में यह प्रसंग इस प्रकार से वर्णन किया गया है कि जब सोमरा अपने बाबा से पूछता है कि हमें टुंगरी पर काहे भागना पड़ा तब उसका बाबा कहता है-

"-हमारा सिंगबोंगा उन लोगों से हार गया क्या?

-नहीं रे, सिंगबोंगा कभी हारते हैं। हमारा आजा कैसे हारेगा?

-हमें नहीं बचाया? हमारा घर हमारा खेत सब?

-हम फिर से बनाएंगे सब। जैसे सिंगबोंगा ने धरती बनाया था ना वैसे ही।

और सचमुच मछली और केकड़े की तरह लग गया था एतवा एक नई दुनिया सिरजने में । अखरा भी लिपाया, जहेरथान भी शाल के पास।"[5]

आदिवासी धरती की पीड़ा को महसूस कर उसे अपने वाद्य यंत्र के माध्यम से अखड़ा में अपने समुदायों के बीच प्रकट करते हैं। वैश्वीकरण की परंपरा प्रकृति को निगल रही है। "अखड़ा पर एतवा की बांसुरी जैसे विलाप करती । माँदर उसे चुप कराने की कोशिश करता रहता- धातिंग धींग धातिंग धींग । उधर दूर आसमान में थोड़ी-थोड़ी देर पर ललछौंह उजाला छा जाता । सोमरा दौड़कर एतवा को दिखाता - देखो बाबा, असुर लोग लोहा गला रहा है। चिड़िया- चुनमुन, कीड़ा, फतिंगा सब जलकर कोयला हो रहा है। सोमरा याद दिला रहा था वही कथा लेकिन ये पराजित होने वाले असुर कहां थे न शक्ति से न चालाकी से ।..... विकास यज्ञ की ज्वाला जल चुकी थी और इसकी हवि था कोयला – लोहा। इस धरती की कोख भरी थी कोयला- लोहे से यही तो दोष था इसका।" [6] यही कारण है कि जनजातीय आवास क्षेत्रों में अचानक झाड़ियां जल उठती है, बम ब्लास्ट और फायरिंग होता रहता है।

यह कहानी आदिवासी समाज का प्रकृति के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति प्रकट करने की भी कथा कहती है। कहानी के पात्र 'सोना' और रूपा जब धान रोपने की शुरुआत करती है तो धरती माता के प्रति गीत गाकर, धान की एक गाछी भेंट कर श्रद्धा व्यक्त करती है, उसे धन्यवाद करती है जिसका वर्णन कहानी में इस प्रकार से हुआ है -"कोरे/डोवा अतोम कोरे- खेत की मेड़ पर/ डोभा के किनारे/ डेरा डाले हुए/ बास किए हुए परमेश्वर के आगे/ पृथ्वी माता की गोद में हम इस धान माँ को/ हम इस मड़ुवा मां को/ तुम्हें सौंपते हैं- गाती हुई धान की गाछी और दीया थाली में रखकर खेत के पूरबी कोने में जाती थी और रोआपुना (पहली रोपनी) करती थी।"[7] यह प्रसंग आदिवासी संस्कृति और परंपरा को परिलक्षित करती है ।

यह कहानी झारखंड और पश्चिम बंगाल पर स्थित दामोदर नदी के किनारे बसे आदिवासी जनजाति समुदाय के विस्थापित होने की गाथा व्यक्त करती है। नदी पर बांध बनने के कारण कई गांव डूब गए। सरकार बांध से बिजली प्राप्त करने के मकसद से वहां खुदाई भी शुरू कर दी । उन्हें जल की गुणवत्ता के क्षरण होने की कोई चिंता नहीं। इसकी चिंता सिर्फ एतवा जैसे प्रकृति रक्षक को ही हो सकती है। लोगों को रोजगार भी मिलेगा लेकिन तभी तक जब तक बांध निर्माण पूरा नहीं हो जाता उसके बाद तो सिर्फ बेरोजगार ही है। एतवा के माध्यम से लेखक आदिवासी समाज की चिंता व्यक्त करता है। "कैसी होती होगी बिजली की रोशनी ! आखिर जब दामोदर से बिजली निकाल लेंगे तो पानी में ताकत बचेगी? बिजली के बारे में सोचते ढिबरी बूझाकर सो गया। सुबह उठकर टमाटर देख आने का मन हुआ। सोमरा को कुछ ले जाते देख कर पूछा- छोटा सोमरा पूरी गंभीरता से बोला - माटी का घोड़ा और कुत्ता जो उसने खुद बनाए हैं उन्हें मरांगबुरु के ऊपर ले जा रहा है। डूबने से वह गल जाएंगे। एतवा का दिमाग गरम हो गया।"[8] कई बार बांध निर्माण का विरोध भी किया और विरोध करते-करते अपने प्राण तक न्योछावर कर दिया। आदिवासियों की समर गाथा इतिहासों पर दर्ज है इसमें कोई संदेह नहीं। अपने ऊपर हो रहे अत्याचार को

चुपचाप सहन करने वालों में से नहीं है चाहे उसके लिए अपनी जान दांव पर क्यों न लगानी पड़े। "फागु के बाप ने कहा भी चलो घर। घर!- बोलकर फटी आंखों से कई पल देखता रहा एतवा फिर ताल पर कदम रखने लगा फागु के बाप की उपस्थिति से बेखबर ! पुलिस वाले कई बार भागा चुके थे उसे, एकाध बार तो पिटाई भी हो चुकी थी। लेकिन उसका पइका नृत्य तभी बंद हुआ जब उसकी फुली हुई लाश उस रिजर्वायर से उपला गई खुद ब खुद।"[9]

यह कहानी बिरहोर जनजातियों के जंगलों में विस्थापित होने का यथार्थ चित्रण करती है। बिरहोर जनजाति, जो जंगलों में कुम्भा बनाकर रहते थे वह अब सरकार द्वारा प्रदान किया गया आवास में रहने लगे हैं पर उन्हें इस आवास की पक्की जमीन रास नहीं आती क्योंकि सरकार ने उन्हें घर तो दे दिया पर ठंड से के बचने के लिए उन्हें कंबल तक मुहैया न करा सकी । विकास परंपरा सिर्फ नाम की पूरी हुई। सरकार सिर्फ चुनाव के दौरान ही वोट पाने के लिये विभिन्न तरह की योजनाओं- पशुपालन, आवास योजना, के नाम पर घर बकरियां और मुर्गियां प्रदान तो करती हैं लेकिन उसकी देखभाल के लिए कोई आर्थिक सहायता मुहैया नहीं कराती है जिस वजह से लंबे समय तक इस आवास में रहना उनके लिए कारगर साबित नहीं होता और वापस अपनी कुम्भा में चले जाते हैं। चुनाव पर्व खत्म होने के काफी अरसे बाद जब गुप्ता जैसे प्रशासनिक अधिकार निरीक्षण करने जाते हैं तो उन्हें पता चलता है कि सुविधा सही ढंग से न मिलने के कारण बिरहोर वापस अपनी कुम्भा में चले गए हैं-

"आवास में एक भी आदमी नहीं। गाड़ी की आवाज सुनते ही दूर पर फिर से बनाए गए कुम्भों में से बिलबिलाकर निकले लोग हाथ फैलाए दौड़े-

इसमें काहे नहीं रहता है सब- राजा से पूछा गुप्ता ने जैसे चीन की राष्ट्रपति अनुवादक से पूछते हैं। अनुवादक ने लोगों से पूछा फिर बतलाया- इसमें ठंड लगता है।

-और पत्ता वाला कुम्भा में?

-ठीक लगता है। -अनुदित

पत्रकार कुम्भा की तस्वीरें ले रहे थे मुस्करा रहे थे। गुप्ता लहर रहा था। कचिया , कचिया का आदिम राग बदस्तूर जारी था।

-का सर ! इ तो भिखारी बना दिए इ लोग को- एक मनचले पत्रकार ने फब्ती कसी।

-नहीं, बकरी, मुर्गीपालन.... राजा पूछो ।

-सब मर गए!

-कैसे?

-सब विदेशी था जीने नहीं सका।"[10]

प्रशासनिक अधिकारी पैसों के दम पर आदिवासियों पर हम चलने को अपना अधिकार समझते थे। 'सोमरा' जैसे लोग यदि मेहनत करके काम करने के लिए, अधिकारियों से रोजगार मांगने पर, उन्हें सँड़ासी से पकड़ा

और कुटासी से कुटा जाता है। बिना मतलब का इल्जाम लगाकर उन्हें अपराधी घोषित कर दिया जाता है। "ले काम, और लेबे? सोमरा गुत्थमगुत्थी हो गया। फिर तो चपरासी, राजा और दो सिपाहियों ने मिलकर सँड़ासी से पकड़ा कुटासी से कुटा गितिकथा के ढेंचुआ और केरकेट्टा की तरह कोयले से जलाया लोहे से जलाया पूरे बदन पर नील पड़ गए। खबर फैल गई कि जंगल के एक आदमी ने वी.डी.ओ. साहब पर हमला कर दिया। भीड़ उमड़ पड़ी- तरह-तरह के समाहर्ता, अभिकर्ता, कार्यकर्ता नथिंगकर्ता सब ब्लॉक ऑफिस के आसपास ही मंडरा रहे थे।"[11] आज भी हमारे समाज में यही होता है कि भोले भाले आदिवासियों का बिना किसी अपराध के सताया जाता है। बड़े-बड़े सरकारी नेता आदिवासियों के हित में, उनके ऊपर हो रहे हिंसा का सहारा लेकर, जीते जाते हैं और वास्तव में जब उनके हित में काम करने की बारी आती है तो पीछे हट जाते हैं। आदिवासी पुरुष ही नहीं बल्कि स्त्रियां भी इनके शोषण से बची नहीं है। इनके खिलाफ कदम उठाने पर 'चांदो' जैसी कई महिलाओं को अपनी जान गंवानी पड़ी है। आए दिन अखबार में कई खबरें छपती है कि जंगलों में महिला का शव मिला जो पेड़ पर टंगी है। पुलिस प्रशासन कहते हैं कि महिलाएं भी तथाकथित माओवादियों के साथ मिली हुई होती हैं लेकिन यथार्थ से सब वकिफ़ हैं। माओवादियों को शरण देने के जुर्म में 'सोमरा' और उसकी पत्नी 'चाँदो' दोनों को पुलिस ट्रक पर बिठाकर ले जाती है लेकिन वापस सिर्फ सोमरा आता है। अंत में चाँदो' की लाश जंगल में टंगी हुई मिलती है। आदिवासियों को पड़कर अपनी बड़ी उपलब्धि साबित करते हैं आई.पी.एस 'विकास चतुर्वेदी' जैसे लोग। महिलाओं का शोषण कर उसे आत्महत्या का रूप देते हैं। "दूर जंगल में एक पेड़ पर चाँदो अपनी ही साड़ी से बंधी पायी गयी। जाँघों पर खून के धब्बे सूखे पड़े थे, चीटियाँ चल रही थी।"[12] पुलिस प्रशासन द्वारा तरह-तरह के किस्से गढ़ कर हमारे समक्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। चाँदो के मरने के बाद और सोमरा के गिरफ्तारी के बाद फर्जी एन.जी. ओ. कार्यकर्ता 'अर्जुन कुजूर' की तरह ,नौकरी दिलवाने के नाम पर झाड़ू- पोंछा करवाने का काम दिलाता है दिल्ली में। इस बात से कोई अनजान नहीं है कि दिल्ली, मुंबई जैसे शहरों में झाड़ू -पोंछा के नाम पर आदिवासी लड़कियों को किस लिए भेजा जाता है, यह किसी से छिपा नहीं है। "रोजगार वही झाड़ू पोछा का जैसा रूपा कर रही है दिल्ली में।"[13] कहानी की यह पंक्ति देश में हो रहे मानव तस्करी की ओर संकेत करता है। कहानी में पुलिस प्रशासन किस तरह से अपनी नाकामयाबी को कामयाबी का किस्सा बनाकर हमारे समक्ष प्रस्तुत करती है इसका यथार्थ चित्रण पंकज मित्र की कहानियों में हुआ है। सोमरा मुंडा के संदर्भ में यह किस्सा बताया जाता है कि भोले -भाले आदिवासी, जो विस्थापित होकर जंगलों में रहने को मजबूर था उसे किसी एन्काउन्टर के समय जो दोनों तरफ से चलती गोलियों से घबराकर बकरियों के साथ गड्ढे में छुप जाता है उसे पुलिस पकड़ कर कुख्यात- विख्यात बागी के रूप में पेश करती है लेकिन लाख कोशिश करने के बाद भी यह साबित करने में नाकाम हो जाती है कि वही असली सोमरा मुंडा है और इसी असफलता को छुपाने के लिए एक षड्यंत्र रचकर उसका 'सेंदरा' कर देते हैं। "रात को जेल पर कई सौ लोगों ने हमला बोल दिया। हैरत की बात थी कि किसी ने देखा नहीं इतने सौ लोगों को। जेल को तोंदियल

सिपाही भला उन्हें क्या रोक पाते ! सोमरा मुंडा का सेंदरा हो गया।"[14] वास्तविकता तो यह है कि कहीं 'सोमरा मुंडा' उनके विशिष्ट राज ना खोल दे। इसीलिए पुलिस अधिकारियों ने अपने स्ट्रेटजी के तहत उसका सिर काट कर हटा दिया ताकि उसकी पहचान कोई ना कर सके। 'सेंदरा' कहानी आदिवासियों की आखेट की गाथा कहता है। "यह वर्ग समाज में विशिष्ट वर्गीय हितों के रक्षक राज्यतंत्र द्वारा आदिवासी समुदायों के आखेट की कहानी है सेंदरा का मतलब ही है, आखेट। राष्ट्र राज्य अपनी सीमाओं के भीतर बसे जंगलों में घुसकर वहां के आदिम बाशिंदों का बनैले जानवरों की तरह शिकार कर रहा है। सेंदरा सिर्फ सोमरा का नहीं हुआ है, वह एतवा और चाँदो जैसे लाखों आदिवासियों का होता आया है।"[15] यह कहानी अनवरत जनजातियों पर विकास के नाम पर, विभिन्न परियोजनाओं- सड़क, बाँध, जल, विद्युत केंद्र निर्माण के नाम पर पुरखा जमीनों को हथियाना और जबरन विस्थापित करने की महाकाव्यात्मक दृश्य उभरता है। आदिवासी मूलवासी होकर भी निर्धनता की कड़वी घूंट पीने को मजबूर हैं। वे अपने अस्तित्व और अस्मिता को बचाए रखने के लिए आज भी संघर्षरत हैं ।

इसी तरह पंकज मित्र की कहानी 'चमनी गंझू की मुस्की' है जिसमें 'चमनी गंझू' की चित्रकला को विश्व बाजार में नेम और फेम के लिए 'बेटू इमाम' जैसे लोग इस्तेमाल करते हैं और जब अंत में डॉलर कमाने के बाद 'गेट आउट! जाओ भागो! अन्कल्चर्ड होर।"[16] कहकर आदिवासी कलाकार को अपमानित किया जाता है। प्रकृति को जिसने कला के माध्यम से सींचा , जो आदिवासी चित्रकला को अपनी संस्कृति का एक हिस्सा मानती है- 'कोहबर' और 'सोहराय' पेंटिंग्स की जननी कही जाने वाली अचानक 'अनकल्चर्ड होर' बन जाती हैं । 'बेटू इमाम'; पुरातात्विक खोजकर्ता बन जाता है। लेकिन यथार्थ यह है कि इन गुफा चित्रों की खोज स्वयं 'चमनी गंझू' ने की थी। वो तो गुफा चित्रों की महत्ता से अनजान होने के कारण उसे उसकी उपलब्धि समझ नहीं आई। केवल सौ रुपया के लालच में आकर देहाड़ी की तरह पेंटिंग्स बना दी और बेटू इमाम को दे देती थी। "फोटू तो बढ़िया बनावहीं ,पहड़वा में भी फोटू बनल हौ । एक बार लकड़ी झुरी चुने गेलियो न तो देख लियो। 'बेटू इमाम' बआवाज़े बुलंद चौंके -अँय! पहाड़ में चित्र! उत्तेजना से लाल हो आया था चेहरा । महीन जानना आवाज काँपी – कहाँ चलो तो' । किसी खजाने के हाथ लग जाने की संभावना से दिल ठुमक रहा था ।

अभी हमरा भात रिंधना हौ - चमकी ने बहाना बनाया – कचिया(पैसा) देभी तो....'

'बेटू इमाम' ने पलट डाली कुर्ते की जेबें। सौ के आसपास रुपए निकले। सब चमनी के हाथों में।..... 'चल अब'....."[17]

"कैमरा निकाल कर दनादन तस्वीरें ले रहे थे बेटू सोहराय के चित्रों के साथ चमनी की भी। पूरी दीवार पर बने चित्र के साथ खिलखिलाती साँवली चमनी गंझू । दो सौ निकालकर दिए ।"[18] आदिवासी समाज नेम और फेम की दुनिया में प्रदर्शन की वस्तु बन कर रह गई है । करता कोई और है तथा उसका लाभ किसी और को मिलता है। 'बेटु इमाम' चंद पैसों में चिमनी से पेंटिंग बनवाता और करोड़ों की दाम में अंतरराष्ट्रीय

बाजारों में उसकी तस्वीरें को बेचता था और मशहूर इतना कि "हर प्रेस ब्रीफिंग में बेटू इमाम सब समझाते कोहबर सोहराय आर्ट के बारे में। इसके संबंध पाषाण कालीन कला से, सिंधु घाटी कला से, सिंधुघाटी सभ्यता से और फिर बेजोड़ कलाकार चमनी गंझू के बारे में । अनबीलिबेबल, करिश्मेटिक द -यू फेस ऑफ ट्राइबल आर्ट ऑफ़ -इंडिया - मीडिया गरज रहा था, चमनी की चमकीली तस्वीरें उछाल रहा था।"[19] पंकज मित्र की यह कहानी 'बेटू इमाम' और 'बाबू इमाम' के चरित्र के माध्यम से समाज के उन खलनायकों को प्रदर्शित करती है जिन्होंने आदिवासी महिलाओं को उपभोग की वस्तु समझा। 'बाबू इमाम' जैसे लोग नौकरी के नाम पर मानव तस्करी का काम करते हैं और 'बेटू इमाम' स्वयं को पुरातात्विक खोजकर्ता समझकर चमनी गंझू जैसे जनजाति कलाकारों को प्रदर्शनी की वस्तु बनाकर उसे अंतरराष्ट्रीय बाजारों में बेचने का काम करता है।

इसी तरह की एक और कहानी है 'द इवेंट मैनेजर'। इस कहानी में पंकज मित्र ने आदिवासी लड़कियों को प्रदर्शन की वस्तु समझे जाने का जिक्र किया गया है। महंगाई के दौर में आर्थिक रूप से कमजोर आदिवासी समुदाय स्वयं को प्रदर्शित करने में मजबूर है। "देखिए भाई जी यह ब्रांडिंग का कार्यक्रम है। वी नीड स्मार्ट, यंग ट्राईबल गर्ल।"[20] ये सभी नक्सल पीड़ित गांव से आई लड़कियाँ है मौका मिलेगा तो सीख जायेंगी। इधर-उधर किनारे भी खड़े रहने का काम मिल जाएगा तो थोड़ा आत्मविश्वास आएगा।"[21] उन लोगों को भेज दीजिएगा ट्रेडिशनल आदिवासी ड्रेस में तीन सौ मिलेगा एक दिन का।"[22] इस कहानी में, आधुनिक बाजार की बढ़ती मंहगाई के कारण आदिवासी महिलाओं की मजबूरी परिलक्षित हुई है।

निष्कर्ष

पंकज मित्र आदिवासी जनजीवन की समस्याओं को, संवेदनाओं को सामने लाने का प्रयास किया है। उनकी कहानियों में समकालीन समय में आदिवासी समुदाय किस तरह से शोषण एवं पीड़ित है का यथार्थ चित्रण मिलता है। न चाहते हुए भी आदिवासी समाज वैश्वीकरण का शिकार हो रही है। विकास के नाम पर हो रहे शोषण के विरुद्ध संघर्ष जारी है। जल, जंगल, जमीन ही नहीं बल्कि उनके जन-विकास एवं अस्मिता के बचाव के लिए लड़ाई लड़ रहे हैं , आंदोलन अब भी जारी है । पंकज मित्र हसिए के समाज कहे जाने वालों के संघर्षमय जीवन को अपनी चयनित कहानियों में प्रस्तुत कर सचेत करने का प्रयास किया है।

संदर्भ :-

1. जोशी, रामशरण, हंस, फरवरी, 1993, मुख्य धारा की अवधारणा,सं.- राजेंद्र यादव (पृष्ठ संख्या-28) दिल्ली,अक्षर प्रकाशन.
2. पाखी, सितंबर, 2014, पृष्ठ संख्या -77
3. मित्र, पंकज, (2014)'जिद्दी रेडियो',(पृष्ठ संख्या -114),नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन
4. वही, पृष्ठ- 117
5. वही, पृष्ठ -118

6. वही, पृष्ठ -118 -119
7. वही ,पृष्ठ – 119
8. वही, पृष्ठ -122
9. वही, पृष्ठ -123
10. वही, पृष्ठ- 126
11. वही, पृष्ठ- 127
12. वही, पृष्ठ- 130
13. वही, पृष्ठ- 131
14. वही ,पृष्ठ- 131
15. हंस, अगस्त, 2016, पृष्ठ- 51
16. ,मित्र, पंकज, (2014)'जिद्दी रेडियो',(पृष्ठ संख्या -81),नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन.
17. वही, पृष्ठ- 76
18. वही, पृष्ठ- 78
19. वही, पृष्ठ- 80
20. मित्र, पंकज,(2017)'वाशिंद @तीसरी दुनिया'(पृष्ठ -126), नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन.
21. वही, पृष्ठ- 126
22. वही, पृष्ठ- 126

****